

गोविन्द मिश्र के बाल-साहित्य का युगबोध की दृष्टि से अध्ययन

डॉ. सत्यप्रकाश

सहायक आचार्य

श्रीमति विमला देवी डिग्री कॉलेज बाबू गढ़ छावनी हापुड़ उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

बाल साहित्य का स्वरूप बालकों के समान है। इस विधा की अनेक कोटियाँ हैं इस विधा के अंतर्गत ऐसी रचनाओं की गणना की जा सकती है। जिनमें प्रकृति से निकटता, इतिहास, चेतना, सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना, कर्तव्य, प्रेरणा, मनोविनोद, बौद्धिक व्यायाम से संबंधित सार्थक, सचित्र एवं सुबोध सामग्री प्रस्तुत की जाती है साथ ही वर्तमान वैज्ञानिक युग में बालकों को बाल साहित्य के माध्यम से आधुनिक वस्तुओं की जानकारी प्रदान करना भी आवश्यक है। बच्चों की रुचि एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वयक्रम के अनुसार बाल साहित्य का सृजन श्रेयस्कर होता है ताकि बाल साहित्य द्वारा बालकों की जिज्ञासा शांत की जा सके।

1.1 बाल साहित्य का अर्थ :-

साहित्य शब्द में बाल शब्द उपसर्ग के रूप में जुड़ जाता है तब वह बाल साहित्य माना जाता है। बाल साहित्य दो शब्दों से मिलकर बना है – बाल + साहित्य अर्थात् जो बाल साहित्य बालकों के लिए लिखा जाता है अर्थात् उसे बच्चे लिखें या प्रौढ़ लिखें। यह बच्चों के मनोरंजन, ज्ञानवर्द्धन, जिज्ञासावृत्ति, मानसिक विकास, व्यक्तित्व विकास एवं प्रेरणाप्रद सामाजिक बोध के लिए लिखा जाता है।

बालकों की रुचियों, कल्पनाओं, बौद्धिक क्षमताओं उनकी सूझ-बूझ, उनका परिवेश, उनकी मानसिकता आदि को केन्द्र में रखकर लिखा गया साहित्य 'बाल साहित्य' माना जाता है।

प्रत्येक सभ्यता, समाज एवं संस्कृति भावी पीढ़ी के रूप में बच्चों को विशेष स्थान देती है। सामाजिक प्राणी होने के कारण सभी के मन में यही कामना होती है कि आने वाला समय आज से श्रेष्ठ हो। इसी दृष्टि से बाल साहित्य को समझने का प्रयास किया जाता रहा है।

बच्चों का संसार बड़ों के संसार से सर्वथा भिन्न होता है। आकाश की तरह निर्मल, विशाल होता है। प्रत्येक कार्य को आंकने का उनका अपना नज़रिया होता है। जो लेखक बच्चों के मन तक सूक्ष्म रूप में नहीं पहुँच पाते, वे कदापि नहीं जान पाते कि किन-किन परिस्थितियों में बालक की भावनाएँ या कल्पनाएँ क्या-क्या हो सकती हैं। बाल साहित्यकार के लिए बालवृत्ति के स्तर पर अपने मन को लाना होता है, उसके मनोभावों को समझना होता है। इस तरह बाल मनोविज्ञान को समझने वाला और तदनु रूप रचनात्मकता से प्रेरित साहित्य ही बाल साहित्य कहलाता है।

हिन्दी बाल साहित्य को आधार-भूमि के रूप में संस्कृत सम्पदा मिली तो पोषण के रूप में देश

के कोने-कोने में विद्यमान लोक संस्कृति का जीवन रस भी विपुल मात्रा में प्राप्त हुआ। फूल और बच्चे प्रकृति की सुंदरतम रचनाएँ हैं और बचपन को सुखद और प्रयोजनशील बनाने के लिए जो भी किया जाए कम है, क्योंकि बालक देश-समाज के भविष्य होते हैं। आज का बालक कल का भविष्य है, वह राष्ट्र निर्माता है। अपनी योग्यता के बल पर वह जब बुराईयों से लड़ता है और अपने समाज तथा देश में नई चेतना भरता है, तब वह राष्ट्र विकसित होकर उन्नतशील देशों के समक्ष खड़ा होने योग्य हो जाता है।

जीवन की मुख्य-धारा में पूर्ण आत्मविश्वास के साथ अविचल रहकर अपने भविष्य की ओर कदम बढ़ाने में बालमन के संस्कार एवं शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। बाल मन कच्ची मिट्टी का बना होता है उसे जिस साँचे में ढाला जाए, वह वैसा ही रूप धारण कर लेता है।

बाल मन जिन संस्कारों को ग्रहण करता है। जीवन संध्या तक वे उसके साथ बने रहते हैं। बालक का मन किसी भी बात को आसानी से गहराई से ग्रहण करने में समर्थ होता है। यह कार्य साहित्य के माध्यम से संभव होता है।

विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में आधुनिक युग में बाल साहित्य का स्वरूप भी बदल रहा है। कुत्ता, बिल्ली, तोता, मैना, बंदर, भालू आदि कविताएँ, कहानियाँ अब पुरानी हो गई हैं। आज बच्चे इलेक्ट्रॉनिक और प्रौद्योगिकी क्रांति के दौर से गुजर रहे हैं।

जनसमूह-संचार माध्यमों की आई क्रांति के फलस्वरूप कम्प्यूटर, इन्टरनेट आदि बच्चों के लिए जादुई दुनिया नहीं, वरन् दैनिक उपयोगी चीजे बन गई हैं। अतः वह नया साहित्य चाहता है जो उपदेशात्मक न हो साथ ही उन पर थोपा न गया हो, बल्कि उन्हें एक अजनबी दुनिया में ले जाए।

बाल साहित्य का उद्देश्य विश्व कल्याण, विश्व बंधुत्व और मानव को मानव बनाना साथ ही हृदय को स्नेह से जोड़ना एवं एक आदर्श समाज की स्थापना करना है। तथा मैत्री, प्रेम, दया, परोपकार और देश प्रेम के भावों का साम्राज्य स्थापित करना है। जिससे बालक अपना शैक्षिक परिवेश, अपना संसार, अपनी आकांक्षाएँ, अपनी अस्मिता साहित्य के अंतर्गत पा सकें तथा मानसिक सुकून के साथ मनोरंजन प्राप्त कर सकें। उपरोक्त आधार पर स्पष्ट है कि बाल साहित्य का निर्माण उनके स्तरानुरूप हो, जो उन्हें सद्मार्ग की ओर ले जाए वही बाल साहित्य सार्थक है, श्रेष्ठ है।

महादेवी वर्मा लिखती हैं – “बाल साहित्य निश्चित रूप से इस प्रकार का होना चाहिए कि बालक का रागात्मक संबंध प्रकृति के साथ, पशु-पक्षियों के साथ, नक्षत्रों के साथ, फूलों के साथ और समस्त सृष्टि के साथ स्थापित हो सके। वे एक बौद्धिक आकाश पा सकें। जीवन का आलोक पा सकें।”

निष्कर्षतः जिन साहित्यकारों ने बाल मन को समझा है और बाल साहित्य की आवश्यकता का अनुभव किया है। उन्होंने ही बच्चों के स्वस्थ विकास के लिए इस साहित्य की उपयोगिता के महत्व को जाना है और बच्चे के मन के कौतूहल, कल्पना की क्षमता, सूझ और तलाश की प्रवृत्तियों को अपनाया है, उन्होंने ही बाल रुचि का साहित्य रचा।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि बाल साहित्य वह दर्पण है जो बच्चों के भविष्य को रूपायित करता है। वह काल्पनिक न होकर उद्देश्य परक है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जो मार्ग अपनाया

जाता है वह निश्चय ही बाल सुलभ प्रवृत्ति के अनुकूल होता है।

बाल साहित्य की समस्त परिभाषाओं का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि ये परिभाषाएँ प्रायः उन्हीं साहित्यकारों की हैं जिन्होंने बाल मन को समझा है और बच्चों के लिए बाल साहित्य की आवश्यकता का अनुभव किया है। बच्चों के स्वस्थ विकास हेतु बाल साहित्य की उपयोगिता के महत्व को जाना है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर बाल साहित्य कैसा हो ? इसे निम्न बिन्दुओं में देखा जा सकता है:—

- बच्चों का साहित्य रुचिनुकूल, सरल एवं सहज भाषा का हो।
- बालक की मानसिकता को दृष्टिगत रखकर साहित्य सृजन हो।
- बाल साहित्य मनोरंजन के साथ-साथ उसका मानसिक विकास करने में समर्थ हो।
- बच्चों के लिए साहित्य की रचना इस प्रकार हो कि वह ज्ञान की वृद्धि कर कल्पनाशीलता का विकास भी कर सके।
- बाल साहित्य प्रेरणा प्रदान करने वाला हो।

समसामयिक बाल साहित्य से सर्वाधिक अपेक्षा स्वाभाविक यह है कि वह उन्हें प्रकृति की ओर ले जाए। मनुष्यता को हानि प्रकृति से दूरी होने पर ही हुई है। बहुत ही बारीकी से यह ध्यान रखा जाए कि बच्चों के हाथ में जो साहित्य जा रहा है वह उनमें हिंसक प्रतिस्पर्धा, लालच एवं संकीर्णता के बीज तो नहीं बो रहा है।

निष्कर्षतः बाल साहित्य प्रकृति की तरह निरपेक्ष, छलछल करती नदी के प्यास बुझाने वाले पानी, की तरह निर्मल हो, सूर्य की तरह उनमें उत्साह ऊर्जा पैदा करे, उनमें मानवीय गुणों को रचे।

1.2 बाल साहित्य का स्वरूप

वर्तमान में बाल साहित्य अलग विधा के रूप में अपनी पहचान बना चुका है। बाल साहित्य के स्वरूप पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि बाल साहित्य का स्वरूप बाल मनोविज्ञान को प्रतिबिंबित करने में समर्थ हो। जो साहित्यकार अपने बचपन में लौट सकता है, अर्थात् बच्चों के मानसिक धरातल पर पहुँच सकता है वही उत्कृष्ट बाल साहित्य की रचना कर सकता है।

प्रत्येक व्यक्ति के हृदय के किसी कोने में एक शिशु सदैव विद्यमान रहता है आवश्यकता है उसकी भाषा समझने की। बच्चों में नई-नई वस्तुओं को देखने-समझने की सदैव इच्छा रहती है। अतः बाल साहित्य की पहली कसौटी है बच्चों की जिज्ञासा शांत करना। बाल साहित्य भी संस्कृति का ही अंग है। अतः बाल साहित्य का सृजन ऐसा हो जिसके माध्यम से बच्चों का संस्कृति से सहज ही परिचय हो सके। जिससे उनमें आत्मविश्वास उत्पन्न हो सके और वे अपने देश का इतिहास जानने में समर्थ हो। वे जीवन में आने वाली हर परिस्थिति का मुकाबला करने में समर्थ हो सके तथा यथार्थ की समझ भी विकसित हो। साथ ही यथार्थ और कल्पना का आदर्श समन्वय हो तो बच्चों का संतुलित विकास हो सकता है। अर्थात् वही बाल साहित्य श्रेष्ठ है जो अतीत का स्मरण कर वर्तमान के लिए समझ

विकसित कर भविष्य के लिए जिज्ञासु प्रवृत्ति को भी जागृत कर सके।

बालकों का स्वस्थ मानसिक विकास एवं वैज्ञानिक दृष्टि आधुनिक युग की आवश्यकता बन गई है। इस बात को मद्देनजर रखते हुए बालकों के स्वस्थ बौद्धिक, भावनात्मक एवं मानसिक विकास के लिए बाल मन से जुड़ी साहित्य सामग्री प्रदान करना आवश्यक है तथा जो बालकों के मनोनुकूल हो एवं बालक को सुदृढ़ता और संपूर्णता के साथ विकसित कर सके। चूंकि बालक का मन अत्यंत कोमल होता है, अतः उसके बाल मन पर जो रेखा अंकित होती है, वह कोमल पंखुड़ी पर खींची गई उस रेखा के समान होती है जो गहरे तक अपना चिन्ह छोड़ जाती है।

बच्चों का आधुनिक परिवेश इतना व्यापक तथा विविधताओं भरा है कि माता-पिता, अध्यापक तथा पाठ्य-पुस्तकें उसकी समस्त जिज्ञासाओं का समाधान नहीं कर पाती। उसके चतुर्मुखी विकास के लिए विविधता भरा बाल साहित्य आवश्यक है।

बाल साहित्य को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया गया है:-

(अ) पहला स्वतंत्रता के पूर्व का बाल साहित्य – जो परंपरागत है। यह मौखिक स्वरूप से लिखित स्वरूप तक विकसित हुआ और आज भी हो रहा है।

(ब) दूसरा स्वातन्त्र्योत्तर बाल साहित्य यह आधुनिक परिवेश और बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर विज्ञान और विकास को आधार बनाकर लिखा जा रहा है।

डॉ. हरिकृष्ण देवसरे के अनुसार – “रॉकेट के युग में बच्चों को निश्चय ही धरती की वास्तविक उड़ान से परिचित होना आवश्यक है।”

1.3 हिन्दी बाल साहित्य का विकास

इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में प्रवेश करने के पश्चात् हिन्दी बाल साहित्य के विकास क्रम में बाल साहित्य की लगभग समस्त विधाओं, यथा – गीत, कविता, कहानी, उपन्यास, फंतासी आदि का उत्तरोत्तर समुचित, सुविचारित और सुव्यवस्थित विकास हुआ है। इससे पूर्व 19वीं और 18वीं सदी के उपलब्ध बाल साहित्य पर दृष्टिपात किया जाए तो इनमें मौखिक परंपरा, श्रुति अथवा स्मृति की लोकपरंपराके विपुल साहित्यके अलावा ‘पंचतंत्र’ और ‘हितोपदेश’ जैसी बालपयोगी संस्कृत रचनाएँ भी थीं।

उपर्युक्त साहित्य में कथा शैली में नीति-कथन के माध्यम से बच्चों को संस्कारवान् बनाना ही उद्देश्य था। ‘हितोपदेश’ के रचनाकार नारायण पंडित ने स्पष्ट रूप से कहा है –

“यन्नवे भाजने लग्नः, संस्कारों नान्यथा भवते। कथाच्छलेन बालानां, नीतिस्तदिह कथ्यते।।”

अर्थात् – जैसे नये घड़े पर बना हुआ चित्रांकन (घड़े के पक जाने पर) पक्का हो जाता है उसी प्रकार बचपन के संस्कार भी पक्के हो जाते हैं। इसलिए कथाओं के माध्यम से बालकों को नीति की शिक्षा दी गई।

डॉ. श्रीप्रसाद का भी निष्कर्ष है कि – “प्राचीन संस्कृत बाल साहित्य को विद्वानों ने लोक बोलियों में रूपांतरित करके राजमहल से झोपड़ी तक पहुँचा दिया। रूपांतरण के अंतर्गत देशकाल के अनुसार परिवर्तन किए गए परंतु कहानी की मूल आत्मा को सुरक्षित रखा गया। लोक-बोलियों में आने पर लोक-कथा साहित्य के रूप में बालकों को समृद्ध बाल साहित्य भी प्राप्त हुआ और उन्हीं के समानांतर

नई—नई लोककथाएँ भी रची गई।”

बाल साहित्य का उद्भव लोक साहित्य से ही माना गया है। संसार की सभी भाषाओं के लोक साहित्य का बाल साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है; तथा लोक साहित्य ने ही बाल साहित्य की नींव सुदृढ़ की और उसके विकास में भी सहायक रहा है।

हिन्दी बाल साहित्य की पृष्ठभूमि के निर्माण में संस्कृत बाल साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

संस्कृत बाल साहित्य में ‘कथासरित्सागर’, ‘पंचतंत्र’ आदि प्रमुख हैं। संस्कृत बाल साहित्य रचना की जो परंपरा रही है, वही हिन्दी साहित्य में गृहीत हुई है।

बाल साहित्य का विकास निम्न युगों में विभाजित किया गया है:—

- (1) संस्कृत वाङ्मय में बाल साहित्य
- (2) पूर्व भारतेन्दु युग सन् 1845 से 1873 तक
- (3) भारतेन्दु युग सन् 1874 से 1900 तक
- (4) द्विवेदी युग सन् 1901 से 1930 तक
- (5) आधुनिक युग सन् 1931 से 1946 तक
- (6) स्वातंत्र्योत्तर युग सन् 1947 से 1957 तक
- (7) वर्तमान युग सन् 1958 से अब तक

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बाल साहित्य का उद्भव प्राचीन संस्कृत ग्रंथ ‘पंचतंत्र’, ‘सिंहासन बत्तीसी’, ‘बेताल पच्चीसी’ आदि से माना जाता है। इस समय हिन्दी का अस्तित्व नहीं था। धीरे-धीरे भाषा अपने विभिन्न रूपों में बदलती हुई आज खड़ी बोली हिन्दी के मानक रूप में प्रयोग की जाती है। जब हिन्दी में साहित्यकारों ने बाल साहित्य सृजन प्रारंभ किया तब संस्कृत ग्रंथों को ही आधार बनाया। प्राचीन काल में श्री विष्णु शर्मा के ‘पंचतंत्र’ नामक ग्रंथ में नीतिपरक, प्रेरणाप्रद, साहसिक, मनोरंजक कथाओं को हिन्दी में अनूदित करके बच्चों के सामने प्रस्तुत किया गया। परवर्ती बाल साहित्य भी इसी आधार पर बाल कहानी, उपन्यास, कविता रूप में रचा गया। इस तरह हिन्दी बाल साहित्य विभिन्न रूपों में विकसित हुआ। वर्तमान में इसका समृद्धशाली रूप हमारे समक्ष है।

इस प्रकार हिन्दी बाल साहित्य निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। बाल साहित्य बालकों से सीधा संवाद स्थापित करने की विधा है। बाल साहित्य की विषयवस्तु बालकभीहोसकताहैतथाविस्तृतपरिवेशभीजिसकेसाथ बाल—जीवन विकसित होता है। बाल साहित्य बालकों को उनके परिवेश सामाजिक, सांस्कृतिक परंपराओं, संस्कारों, जीवन मूल्यों, आचार—विचार और व्यवहार के प्रति सतत् चेतन बनाने में अपनी भूमिका निभाता आया है।

वर्तमान में वैज्ञानिकता बाल साहित्य की प्रमुख प्रवृत्ति है। वर्तमान युग विज्ञान का युग है। विज्ञान हमारे जीवन का अंग और आधार है। विज्ञान की महान उपलब्धियों ने विकास को ऊँचे सोपान पर पहुँचाया है। विज्ञान ने न केवल उन्नति के अवसर प्रदान किए हैं बल्कि उनके विकास एवं प्रगति में सहायक बनकर उनकी नई—नई आकांक्षाओं के अनुरूप लिखा जा रहा है। निष्कर्ष रूप में कहा जा

सकता है कि हिन्दी बाल साहित्य आज चतुर्मुखी प्रगति कर रहा है। इन्दौर, भोपाल, उत्तराखण्ड आदि स्थानों में बाल साहित्य शोध केन्द्र की स्थापना इसका प्रमाण है।

1.4 गोविन्द मिश्र के बाल-साहित्य का युगबोध की दृष्टि से अध्ययन

मिश्र जी एक गरीब पण्डित परिवार में जन्मे थे। उन्हें बचपन से ही कुलीन निम्नमध्यवर्ग के संस्कार मिले हैं। पिता और माता से उन्हें निरन्तर कर्म करते रहने के संस्कार मिले हैं। पिता से विशेषकर शुद्धता और जीवन में तटस्थता के संस्कार मिले हैं। मिश्र जी का व्यक्तित्व बहुत ही सहज-सरल है। अपने दोस्तों से मिले अपार स्नेह को वे खोना नहीं चाहते हैं। वे जीवन के प्रति आस्थावान रहे हैं। मिश्र जी 'दर्शन' के नाम पर समाज में प्रचलित झूठी भ्रांतियों से सख्त नफरत करते हैं, पर उनकी रचनाओं में भारतीय दर्शन का काफी प्रभाव देखने को मिलता है और उसका आधार अधिकांशतः उनके जीवनानुभव पर होता है।

उन्हें ऐसे संस्कार मिले हैं कि बड़े पद पर प्रतिष्ठित होते हुए भी पद-पदवी के रोब का दिखावा उनके व्यक्तित्व में लेशमात्र भी नहीं मिलता है। नम्रता, करुणा और भाव प्रवणता उनके व्यक्तित्व में झलकती है। इतने प्रतिष्ठित कथाकार होते हुए भी वे आम लोगों से बहुत ही सहज रूप से मिलते हैं। वे प्रेम को आदर्श मानते हैं। मिश्र जी को अंहकार छू भी नहीं पाया है, जिस कारण वे दूसरों के अच्छे गुणों व बातों को, उनके अनुभवों को अपने में समेट लेते हैं। मिश्र जी में कृत्रिमता का अभाव है। उन्होंने हमेशा से ही निःस्वार्थ भाव से दूसरों की मदद की है और करते आ रहे हैं चाहे वो आर्थिक रूप से हो या अपने विचारों के मार्गदर्शन के द्वारा हो।

गोविन्द मिश्र की सृजन यात्रा को चालीस से अधिक वर्ष पूरे हो चुके हैं। ऐसा कहा जाता है कि रचनाकार की स्मृति में बचपन में जो जम जाता है वही आगे फलता-फूलता है—वह सृजन कर्म को प्रभावित करती है। इसलिए उनका बाल्यकाल कैसा रहा? यह जानना जरूरी है। मिश्र जी के बचपन को दो भागों में बाँटा जा सकता है—एक चरखारी, जहाँ वे आठवीं कक्षा तक पढ़े। गोविन्द मिश्र जिस मोहल्ले में रहते थे वहाँ हमेशा हिंसा लड़ाई-झगड़ा और मारपीट होती ही रहती थी, जिसका प्रभाव उनके उपन्यासों में दिखाई देता है। आगे की पढ़ाई के लिए वे नवीं कक्षा से इण्टरमीडिएट तक बांदा में ही रहे। बांदा भी बुंदेलखण्ड का एक हिस्सा है पर वहाँ का परिवेश चरखारी से एकदम भिन्न था। वहाँ प्रेम का परिवेश था। बुंदेलखण्ड में ही उन्हें दो चीजें हिंसा और प्रेम बारी-बारी से देखने को मिली। ये दोनों एकदम विपरीत किस्म के अनुभव उन्हें बचपन में ही हो गए।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बाल्यावस्था में जिस तरह के परिवेश में वे रहे उसका पूरा का पूरा प्रभाव उनके कथा साहित्य में भी देखने को मिलता है।

बालकथा

इसमें चार बाल कहानियों का संकलन है। 'कवि' के घर में चोर' कहानी में एक कवि के घर में एक चोर आता है और कुछ कपड़े व कुछ सामान चोरी करके भाग जाता है। वह पूरा सामान चोरी नहीं कर पाता है क्योंकि घर के लोग जाग जाते हैं। कवि की पत्नी कवि को पुलिस में चोर के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज करवाने के लिए कहती है पर कवि पुलिस के पास नहीं जाता है। वह रात को अंधेरे में

अपनी छत पर चोर के लौट के आने का इंतजार करता है। तब सचमुच में एक दूसरा चोर आ जाता है। कवि जो कि खुद पान खाता था वह चोर के सामने भी पान खाने का प्रस्ताव रखता है और उससे कहता है कि घर का जो सामान चाहिए वह ले जाओ। चोर कवि की बातें सुन शर्म से गड़ जाता है। वह सामान छोड़ के जाने लगता है तो कवि उसे सामान लेते जाने के लिए कहता है, साथ ही यह भी कहता है कि उसे जो मन है खाए और रजाई भी लेते जाए क्योंकि ठंड में जरूरत पड़ सकती है। कवि को चोर पर दया आती है क्योंकि वह ठंड में लोगों की मार और जेल सबका खतरा लेते हुए चोरी करता है। जब चोर रजाई लेने से मना करता है तब कवि उससे कहता है कि पिछली बार जब चोरी करने आए थे और जो सामान लेकर गए थे वे सभी सामान लौटा दे। तब चोर कवि को बताता है कि मैं वह चोर नहीं हूँ जो पहले सामान चोरी करके ले गया था। चोर कवि को आश्चर्य करता है कि अपने गिरोह में पता लगाएगा। चार-पाँच दिनों के बाद पहले का जो सामान चोरी हुआ था वह कवि को अपने छत पर पड़ा मिल जाता है। इस तरह से देखते हैं कि कोई भी इन्सान बुरा नहीं होता उसकी परिस्थितियाँ ही उससे बुरा काम करवाती हैं। इसका उदाहरण चोर में हृदय- परिवर्तन को लिया जा सकता है। 'मास्टर मन्सुखराम' एक अनपढ़ नाई की कहानी है जो बड़े-बड़े अफसरों का बाल काटता है। एक बार वो अपनी नासमझी में छोटे अफसर को बड़ा अफसर मान पहले उसके यहाँ बाल काटनें चला जाता है और बड़े पुलिस अफसर के घर बाद में। तब बड़ा पुलिस अफसर उस पर अपनी ताकत व रौब दिखाता है। अपनी अहं संतुष्टि के लिए वह इस हद तक जाता है कि नाई को जूते भी लगवाता है।

'ठाकुर साहब का व्रत', इसमें एक छात्र व्रत रखता है पर चोरी-चोरी दिनभर खाते रहता है। इसमें दिखावे का व्रत करनेवालों पर व्यंग्य कसा गया है। 'आदमी का जानवर', इसमें ऐसे लोगों की कहानी है जो अपनी चालाकी से जानवरों को अपने स्वार्थ के लिए अर्थात् पैसे बनाने के लिए जानवरों का शिकार करते हैं व उन्हें मारते हैं। जानवरों को मारकर उनके खाल, नाखून और हड्डियाँ बेचाते हैं। इसमें जंगल में एक शेर को जहर देकर उसकी खाल किस तरह नोच ली जाती है, उसका वर्णन है। बच्चों को जागरूक किया गया है कि जानवरों की हत्या कैसे रोकी जाए। इसी तरह से जो लोग चिड़िया को घर में पालतू बनाकर कैद करके रखते हैं उसकी ओर भी ध्यान खींचा गया है। इसी तरह से एक व्यक्ति अपने घर पाँच-छः चिड़िया लेकर आता है। जिनके पंख नोचे हुए होते हैं। वे उड़ नहीं सकतीं पर बाद में जब पंख आते हैं तब वे उड़ने लगती हैं पर दुर्भाग्यवश वे सभी एक-एक करके पंखे से टकराकर या किसी अन्य वजह से मर जाती हैं। इस तरह चिड़िया के माध्यम से लेखक बच्चों को यह बताना चाहता है कि पशु – पक्षियों को कैद करके रखना गलत है। आप अगर न चाहें हों तब भी उनकी हत्या किसी न किसी वजह से हो जाती है। पक्षियों को खुला ही रखना चाहिए, कैद करके नहीं। आदमी के क्रूर व्यवहार के कारण आदमी भी जानवर होता जा रहा है। जानवर तो सिर्फ अपने बचाव में हमला करते हैं पर आदमी अपने स्वार्थवश चालाकी से उसे मारता है। बच्चों के लिए बनाई गई ये कहानियाँ बहुत ही सरल भाषा में हैं ताकि वे आसानी से समझ सकें। इन कहानियों के द्वारा बच्चों को समाज में हो रही अमानवीयता व कुरीतियों के प्रति जागरूक किया गया है।

अतः समकालीन कथा लेखन में अपना विशिष्ट पहचान बनानेवाले प्रसिद्ध लेखक गोविंद मिश्र के

कृतित्व के विषय में निष्कर्षतः निम्नलिखित इन विशेषताओं को रेखांकित किया जा सकता है, जैसे कि

- वे मानव की मनः स्थिति का बड़ा सुंदर और सटीक चित्रण करते हैं।
- लेखक का अधिकांश लेखन आत्मकथात्मक है।
- पात्रों के मन के सूक्ष्म तंतुओं को टटोलने और उकेरने में लेखक की संवेदनात्मक भाषा का विशेष योगदान है।
- उनके पात्रों के क्रियाकलापों में कथ्य के विकास के अनुरूप नैसर्गिक स्वाभाविकता आती है जो कि कथा-रचना की सफलता में विशेष भूमिका अदा करती है।
- उनका कथा साहित्य विविध आयामी है।

गोविंद मिश्र एक खुले साहित्यकार हैं, जो बाह्य और अंतर्जगत दोनों के चितेरे हैं। इस तरह से गोविंद मिश्र में हर तरह के उम्दा साहित्य-सृजन की क्षमता है।

गोविन्द मिश्र का जिस तरह से रचना संसार बहुविध रहा है ठीक उसी प्रकार उसमें अन्तर्निहित अन्तर्वस्तु एवं संवेदना भी बहुरूपता से युक्त है। इन्होंने अपने समय में प्रचलित साहित्यिक विचारधाराओं या वादों से प्रभावित हुए बिना तत्समय के प्रासंगिक मुद्दों को अपने उपन्यासों एवं कहानियों का विषय या अन्तर्वस्तु बनाया है। इन्होंने अपने बाल साहित्य में अन्तर्वस्तुओं को अपनी संवेदना की गहराई से संपृक्त करते हुए पाठको तक अपनी अभिव्यक्ति को पहुँचाया है।

1.5 निष्कर्ष-

गोविन्द मिश्र ने कहानी एवं उपन्यासों की भाँति अपने बाल साहित्य में समकालीन जीवन में व्याप्त विभिन्न समस्याओं जैसे- पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक, साहित्यिक नैतिक आदि को अपनी कहानियों का अन्तर्वस्तु बनाते हुए अपने जीवनानुभवों का सार्थक सन्निवेश करते हुए अपनी संवेदना से आपूरित किया है। गोविन्द मिश्र के बाल साहित्य में भाषा-शिल्प पर अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मिश्रजी ने अपने कथानुरूप भाषा-शिल्प के चयन में कुशलता का परिचय दिया है। गोविन्द मिश्र भाषिक कौशल में बेजोड़ हैं-यह सर्वविदित है। इनके कथा-साहित्य में प्रयुक्त भाषा पात्रानुकूल, प्रतीक-बिम्ब युक्त, चित्रात्मक, काव्य के गुणों से युक्त, मुहावरे एवं लोकोक्तियों से परिपूर्ण, समृद्ध शब्द भण्डार युक्त है। देश के विविध भागों में बोली जाने वाली भाषाओं जैसे- ब्रजभाषा, अवधी, इत्यादि का सुन्दर नियोजन इनके साहित्य में हुआ है। जहाँ तक बुंदेलखण्डी भाषा का सवाल है तो उस पर इनका जन्मसिद्ध अधिकार है। समकालीन हिन्दी कथा साहित्य लेखकों में गोविन्द मिश्र एक प्रतिष्ठित चेहरा हैं। इनके साहित्यिक अवदानों को देखते हुए हिन्दी साहित्य सृजन हेतु दिए जाने वाले विभिन्न पुरस्कारों जैसे-व्यास सम्मान, साहित्य अकादमी पुरस्कार, सुब्रमण्यम भारती सम्मान, सरस्वती सम्मान सहित लगभग सभी प्रतिष्ठित सम्मानों/पुरस्कारों से सम्मानित किए जा चुके हैं। इस प्रकार निष्कर्षतः कह सकते हैं कि गोविन्द मिश्र मानवीय मूल्यों के चितेरे, कुशल प्रशासक, प्रतिष्ठित लेखक, भारतीय संस्कृति के प्रेमी, परम्परा और आधुनिकता के समन्वय कर्ता, यायावरीय, प्रकृति प्रेमी, सजग नागरिक, पारिवारिक संबंधों

को सम्मान देने वाले व्यक्ति के रूप में प्रतीत होते दिखाई देते हैं।

ग्रन्थ सूची

- 1.. वीर, केशव प्रथम (आलेख) (2007) गोविंद मिश्र की भाषा, गोविंद मिश्र सृजन के आयाम, (सं.) चन्द्रकांत बांदिवडेकर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-36।
2. मिश्र, गोविंद (1984) नये पुराने माँ बाप, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-भूमिका से।
3. मिश्र, गोविंद (1984) नये पुराने माँ बाप, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- भूमिका से।
4. मिश्र, गोविंद (2076) मेरी प्रिय कहानियाँ, राजपाल एंड संस, दिल्ली, पृष्ठ संख्या-10।
5. जोशी, हिमांशु (2003) मेरे साक्षात्कार, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली पृष्ठ संख्या-160-161।
6. शर्मा, कृष्णदेव, (2005) विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, पृष्ठ संख्या-113।
7. मिश्र, गोविन्द (1984) खाक इतिहास, प्रकाशक राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, पृष्ठ संख्या-94।
8. मिश्र, गोविंद (2005) गोविंद मिश्र चुनी हुई रचनाएँ, खण्ड-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-274।
9. सिंह, पुष्पपाल (आलेख) (2007) 'खाक इतिहास' : खाक बनते इतिहास का ममत्व. बोध, गोविंद मिश्र सृजन के आयाम, (सं.) चंद्रकांत बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या-326।
10. बांदिवडेकर, चंद्रकांत (2000) गोविंद मिश्र का औपन्यासिक संसार, भूमिका प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 21।
11. मिश्र, गोविन्द (1978) धाँसू, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-101।
12. बांदिवडेकर, चंद्रकांत (2000) गोविंद मिश्र का औपन्यासिक संसार, भूमिका प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ संख्या-64।
13. मिश्र, गोविंद (1987) पगला बाबा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-25।
14. मिश्र, गोविंद (2003) चुनी हुई रचनाएँ (खण्ड-1), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 169।
15. मिश्र, गोविंद (1998) हवाबाज़, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-108।